इकाई 3 अनुवाद : प्रक्रिया, प्रविधि एवं चुनौतियाँ

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 अनुवाद प्रक्रिया

3.3 अनुवाद प्रक्रिया का महत्व

3.4 अनुवाद पुनरीक्षण

3.4.1 अनुवाद पुनरीक्षण की प्रक्रिया

3.4.2 अनुवाद पुनरीक्षण का महत्व

3.5 अनुवाद की चुनौतियाँ : विविध स्तर

3.5.1 विषय–वस्तु के स्तर पर

3.5.2 सामाजिक–सांस्कृतिक स्तर पर

3.5.3 अनुवाद में मूलनिष्ठ बनाम ईमानदार अनुवाद का प्रश्न

3.5.4 अभिव्यक्ति के स्तर पर

3.5.5 शैली के स्तर पर

3.6 सारांश

3.7 अभ्यास के लिए प्रश्न

3.8 उपयोगी पुस्तकें

3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- अनुवाद की प्रक्रिया और उसके विभिन्न चरणों के विषय में जान सकेंगे;
- अनुवाद के विविध साधनों और अनुवाद में इनके प्रयोग एवं उपयोगिता को समझ सकेंगे;
- अनुवाद की प्रक्रिया में पुनरीक्षण से क्या अभिप्राय है, यह जान सकेंगे;
- अनुवाद पुनरीक्षण की प्रक्रिया तथा महत्व को समझ सकेंगे; तथा
- अनुवाद पुनरीक्षक से क्या–क्या अपेक्षाएँ होती हैं, यह जान सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों में आपने अनुवाद के विषय में अलग–अलग तरह की जानकारी प्राप्त की होगी। इस इकाई में हम अनुवाद की प्रक्रिया, पुनरीक्षण, पुनरीक्षण के महत्व तथा अनुवाद की चुनौतियों के विविध स्तरों, अनुवादक की वैचारिकता तथा मूलनिष्ठ अनुवाद बनाम ईमानदार अनुवाद के प्रश्न पर विस्तार से बात करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात अनुवाद प्रक्रिया के विभिन्न चरणों – विश्लेषण, अंतरण, पुनर्गठन,

अनुवाद करते समय आने वाली समस्याओं – चाहे वे भाषिक हों या पारिभाषिक या फिर अवधारणात्मक आदि, इनसे जूझने के लिए क्या करना चाहिए, इन सबके विषय में विस्तार से समझ पाएंगे। साथ ही, यह भी जान पाएँगे कि कोई भी अनुवाद तभी पूर्ण हो पाता है जब वह पुनरीक्षण की प्रक्रिया से गुज़रता है। पाठ के पुनरीक्षण के माध्यम से ही हम यह जान पाते हैं कि अनुवाद की दृष्टि से पाठ कितना संप्रेषणीय बन पाया है। पुनरीक्षण की यह प्रक्रिया अनुवाद के दौरान अनायास हुई भूलों को पहचानने और उन्हें सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

अनुवाद मूलतः स्रोतपाठ का लक्ष्यपाठ में अंतरण है। इस प्रक्रिया के दौरान अनुवादक को विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अंतरण की इस पूरी प्रक्रिया में कभी उसके समक्ष भाषिक अड़चनें आती हैं तो कभी सामाजिक–सांस्कृतिक। इस इकाई में अनुवाद के दौरान विभिन्न स्तरों पर आने वाली समस्याएँ किस प्रकार अनुवादक के लिए चुनौती बन जाती हैं, तथा किस प्रकार अनुवादक इन चुनौतियों का सामना करते हैं, इसके विभिन्न आयामों पर विस्तार से चर्चा की जाएगी।

3.2 अनुवाद प्रक्रिया

अनुवाद प्रक्रिया में स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा का उचित ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। अच्छे अनुवादक के लिए इन दोनों का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। साहित्यानुवाद में अनुवादक से अपेक्षाएँ और अधिक बढ़ जाती हैं। साहित्यानुवाद में अनुवादक को स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के साथ–साथ दोनों भाषाओं की संस्कृति का ज्ञान होना भी अत्यंत आवश्यक है। उदाहरण के लिए यदि किसी जर्मन पाठ का हिंदी में अनुवाद करना है तो अनुवादक के लिए इन दो भाषाओं के ज्ञान के अलावा जिस चीज की आवश्यकता है वह है इन दोनों की संस्कृतियों का ज्ञान। और यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि यह ज्ञान फौरी या सतही किस्म का न हो अन्यथा अर्थ का अनर्थ हो जाने की संभावना होती है।

अनुवाद प्रक्रिया पर विभिन्न अनुवाद चिंतकों ने चर्चा की है। यूजीन नायडा अनुवाद के मूलतः तीन चरणों की बात करते हैं। ये तीन चरण हैं – पाठ विश्लेषण, अंतरण और पुनर्गठन।

न्यूमार्क के अनुसार अनुवाद प्रक्रिया के तीन चरण हैं – बोधन, अभिव्यक्तिकरण और पाठ निर्माण।

न्यूमार्क द्वारा बताए गए अनुवाद प्रक्रिया के ये तीन चरण नायडा द्वारा बताए गए तीन चरणों से मिलते–जुलते ही हैं।

वहीं, अन्य महत्वपूर्ण अनुवाद चिंतक बाथगेट अनुवाद प्रक्रिया को और व्यापक रूप से देखते हुए अनुवाद प्रक्रिया के सात चरण बताते हैं – समन्वयन, विश्लेषण, बोधन, पारिभाषिक अभिव्यक्तीकरण, पुनर्गठन, पुनरीक्षण और पर्यालोचन। बाथगेट द्वारा संकेतित इन सात चरणों में से प्रथम पाँच चरण नायडा तथा न्यूमार्क द्वारा बताए गए अनुवाद प्रक्रिया के विभिन्न चरणों का व्यापक रूप हैं, वहीं बाथगेट ने पुनरीक्षण तथा पर्यालोचन को भी अनुवाद प्रक्रिया के महत्वपूर्ण चरणों के रूप में व्याख्यायित किया है। पुनरीक्षण तथा पर्यालोचन – पुनरीक्षण में जहाँ अनूदित पाठ का पाठ तथा संदर्भगत आधार पर पुनरीक्षण किया जाता है तथा किसी भी तरह की त्रुटि पाए जाने पर उसमें संशोधन किया जाता है वहीं पर्यालोचन में पाठ की विषयगत प्रामाणिकता को परखा जाता है।

अनुवाद की संज्ञानात्मक प्रक्रिया (cognitive process) में व्याख्यात्मक प्रारूप (interpretive model) के प्रवर्तक डेनिका सेलेस्कोविच तथा मरियाने लेडरर संगोष्ठी निर्वचन के संदर्भ

में अनुवाद प्रक्रिया के तीन महत्वपूर्ण चरण बताते हैं – पठन तथा बोधन, डिवर्बलाइज़ेशन अथवा मौखिकीकरण और पुनःप्रस्तुतीकरण। जीन डेलिसेल अनुवादक द्वारा अनूदित पाठ को पुनः पढ़ने तथा उसके मूल्यांकन के संदर्भ में एक अन्य चरण की भी चर्चा करते हैं जिसे वे वेरिफिकेशन अथवा प्रमाणीकरण कहते हैं। (संदर्भ : Munday, Jeremy (2001) Introducing Translation Studies : Theories and applications,Routlege, London and Newyork, pg.63)

डॉ भोलानाथ तिवारी ने अपनी पुस्तक *अनुवाद विज्ञान : सिद्धांत एवं प्रविधि* में अनुवाद प्रक्रिया के पाँच चरणों की चर्चा की है। उनके अनुसार पाठ विश्लेषण, अंतरण और पुनर्गठन के बाद अनूदित पाठ का समायोजन और मूल पाठ से तुलना भी आवश्यक है। तभी अनुवाद की प्रक्रिया संपूर्ण हो पाती है। उनके अनुसार अनुवाद प्रक्रिया के ये पाँच चरण हैं – पाठ–पठन, पाठ–विश्लेषण, भाषांतरण, समायोजन एवं मूल से तुलना।

अनुवाद की प्रक्रिया के विभिन्न चरणों पर चर्चा करते हुए हमने यह अनुभव किया कि विभिन्न अनुवाद चिंतकों द्वारा बताए गए अनुवाद प्रक्रिया के चरणों में काफी हद तक समानता है। इसी क्रम में जिसकी चर्चा जीन डेलिसेल करते हैं, अनुवाद प्रक्रिया के बाहर भी कुछ महत्वपूर्ण चरणों की चर्चा की जाती है जैसे – पुनरीक्षण, मूल्यांकन तथा समीक्षा। अनुवाद प्रक्रिया के इन बाह्य चरणों में से पुनरीक्षण की विस्तृत चर्चा इस इकाई में भी की जाएगी।

समायोजित रूप से कहें तो अनुवाद प्रक्रिया के ये चरण निम्न प्रकार हैं :

- पाठ अध्ययन
- पाठ विश्लेषण
- भाषांतरण
- प्रतिस्थापन
- तुलनात्मक विश्लेषण

पाठ अध्ययन : अनुवाद करते समय इन सभी चरणों पर अनुवादक को विचार करना होता है। सर्वप्रथम मूल पाठ को समग्रता से पढ़ा जाता है। इस समग्रता के भीतर अनुवादक मूल पाठ की वस्तु, उसकी प्रकृति, उद्देश्य आदि को समझने का प्रयत्न करते हैं। यहाँ यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि सर्जनात्मक साहित्य की भाषा गैर सर्जनात्मक भाषा से पूर्णतः भिन्न और गहन अर्थ संपन्न होती है। तात्पर्य यह कि यहाँ विचार के साथ भावों का भी सामंजस्य होता है। इसलिए अनुवादक के लिए बहुत गंभीरता से इसका अध्ययन किए जाने की आवश्यकता है। यह भी संभव है कि अर्थ के जितने स्तर मूल रचनाकार ने दिए हों उतना जतन करने पर भी अनुवादक उन अर्थ स्तरों तक न पहुँच पाए। और संभव यह भी है कि वह लेखक से भी बेहतर अर्थच्छायाओं को ढूँढ निकाले। ऐसी स्थिति में कई बार अनुवाद मूल से भी बेहतर बन पड़ता है। किंतु ऐसा करते समय अनुवादक को अपनी सीमाओं का भी ध्यान रखना चाहिए। पूरे ध्यान से पढ़ने के बाद अनुवादक पाठ का विश्लेषण करते हैं।

पाठ विश्लेषण : इस चरण में अनुवादक अनुवाद की प्रक्रिया को तय करते हैं। यह पूरी प्रक्रिया आंतरिक होती है जिसमें अनुवादक एक मनःस्थिति तक पहुँच जाते हैं। इसी चरण के अंतर्गत अनुवादक को यह भी तय करना होता है कि अनुवाद की भाषा क्या हो। अर्थात अनुवादक के लिए सबसे पहले यह जानना आवश्यक है कि वे किसके लिए अनुवाद कर रहे हैं। यानी उस अनुवादक का ग्राहक कौन है। और स्पष्ट शब्दों में कहा

जाए तो यह कि यदि अनुवादक शेक्सपीयर का अनुवाद कर रहे हैं या फिर कालिदास की किसी रचना का अनुवाद कर रहे हैं तो उसकी भाषा क्या होगी। क्या वह वैसी ही शास्त्रसम्मत भाषा होगी या फिर उसे समयानुसार बदलना होगा। पाठक की आयु, उसकी क्षमता, उसकी आवश्यकता आदि सभी बिंदुओं पर यहीं विचार किया जाना आवश्यक है। इसी के अंतर्गत पाठानुवाद के उद्देश्य की भी चर्चा होगी। कई बार अनुवाद करने का उद्देश्य केवल वस्तु तक सीमित होता है। और कई बार यह और विस्तृत होकर उसके शिल्प, उसकी भाषा के प्रति भी उतना ही गंभीर होता है। यहीं अनुवादक को यह भी तय करना होता है कि अनूद्य कृति की विधा के प्रति उसका क्या दृष्टिकोण है। उसके अनुसार ही उन्हें अनुवाद की नीति तय करनी होती है।

तीसरा चरण **भाषांतरण** है जिसमें अनुवादक मूल भाषा के कथ्य को लक्ष्य भाषा में अंतरित करते हैं। यह विश्लेषण के ठीक बाद का चरण है जिसके तहत अनुवादक तय रणनीति के अनुसार पाठ का भाषांतरण करते हैं। इस प्रक्रिया के तहत सही भाषा का चयन, सही वाक्य संरचना, भाषा का अपना मुहावरा, कथ्य के साथ न्याय आदि विभिन्न बिंदुओं का ध्यान रखा जाता है। यह वास्तव में एक जटिल चरण है जिसमें अनुवादक भाषा, प्रतीकों, संवेदनाओं, अर्थच्छायाओं आदि के सही प्रयोग की समस्या से जूझते रहते हैं। डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार, यह अंतरण मुख्यतः तीन प्रकार का हो सकता है – (क) किसी इकाई का समान इकाई में, जिसे शब्द–शब्द, पदबंध–पदबंध, उपवाक्य–उपवाक्य, वाक्य–वाक्य, वाक्यबंध–वाक्यबंध अंतरण कह सकते हैं। (ख) बड़ी इकाई छोटी इकाई (जैसे उपवाक्य–पदबंध): (ग) छोटी इकाई–बड़ी इकाई (जैसे पदबंध उपवाक्य)।

इस प्रक्रिया का अगला चरण है **प्रतिस्थापन**। यह भाषांतरण के बाद और कहें तो लगभग साथ की ही प्रक्रिया है जिसके तहत अनुवादक स्रोत भाषा की वाक्य संरचना, पदबंध, प्रवाह, अर्थच्छाया, शब्द संगति आदि को लक्ष्य भाषा के पाठ में रखकर तो देखते हैं ही, साथ ही दोनों भाषाओं की संस्कृतियों के साथ न्याय हो पाया है या नहीं, यह भी देखना यहाँ आवश्यक हो जाता है। दरअसल सर्जनात्मक साहित्य और गैर–सर्जनात्मक साहित्य के बीच यही मूलभूत बिंदु है जहाँ आकर दोनों के अनुवाद की प्रक्रिया में अंतर आ जाता है। जहाँ गैर सर्जनात्मक साहित्य विचार के संप्रेषण के साथ ही संपन्न हो जाता है वहीं सर्जनात्मक साहित्य इस बिंदु पर केवल एक आयाम तक ही पहुँच पाता है। इसके बाद के चरण में अनुवादक को दोनों संस्कृतियों के बीच के तालमेल का भी खासा ध्यान रखना पडता है। अनुवाद पढ़ते समय उसमें मूल की सी गति हो इसके लिए आवश्यक है कि वह लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुकूल हो। उसमें मूल पाठ में कही गई बात पूरी तरह से आ सके।

तुलनात्मक विश्लेषण या कि मूल्यांकन साहित्य के अनुवाद का अंतिम तथा सबसे कठिन चरण है जिसके तहत मूल्यांकनकर्ता दोनों पाठों को आमने–सामने रखकर न केवल भाषिक और पाठगत आधार पर तुलना करते हैं अपितु इस तुलना का एक अन्य महत्वपूर्ण आधार होता है सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों का मिलान। पाठ के प्रकाशन से पूर्व तथा उपरांत मूल्यांकनकर्ता मूलपाठ तथा अनूदित पाठ का मिलान कर अपनी टिप्पणी देते हैं जिसकी सहायता से अनुवाद को यथासंभव सुधारा जा सकता है। जिसकी सहायता से अनुवाद को यथासंभव सुधारा जा सकता है। तुलनात्मक विश्लेषण में मूल्यांकनकर्ता विभिन्न आधारों पर मूल्यांकन करते हैं जिसके अंतर्गत मूल्यांकन का आधार कभी मूलपाठ होता है तो लक्ष्य समाज। यह मूल्यांकन भाषा से लेकर संदर्भ सभी आधारों पर किया जाता है। इसमें उत्तम अनुवाद से तुलना भी एक आधार है।

इन चरणों के अतिरिक्त अनुवाद प्रक्रिया को संपूर्णता में समझने हेतु पुनरीक्षण की चर्चा भी आगे की जा रही है।

3.3 अनुवाद प्रक्रिया का महत्व

अनुवाद कार्य स्वयं में एक जटिल तथा श्रमसाध्य क्रिया है। अनुवाद करते समय अनुवादक को परकाया प्रवेश करना होता है। किसी पाठ को पाठक की तरह पढ़ना तथा अनुवादक की तरह पढ़ना में बहुत अंतर है। पाठ पढ़ते हुए आप उसका सतत आनंद ले सकते हैं लेकिन अनुवाद करते समय प्रत्येक पंक्ति पर रुकना, प्रत्येक शब्द के लिए सही पर्याय खोजना, प्रत्येक अभिव्यक्ति को उचित तरीके से पुनःप्रस्तुत करना बेहद चुनौतीपूर्ण कार्य हैं।

अनुवाद प्रक्रिया को बेहद सरल उदाहरण से समझा जा सकता है। आप सभी फिल्म, धारावाहिक आदि देखते होंगे। किसी फिल्म या धारावाहिक को देखते हुए क्या आपने कभी उसकी निर्माण प्रक्रिया पर विचार किया है? आपके सामने प्रस्तुत दृश्य के निर्माण में फिल्म निर्देशक से लेकर पूरी टीम को कितना श्रम करना पड़ा होगा, इसकी कल्पना करना भी मुश्किल है क्योंकि आपके सामने प्रस्तुत दृश्य को उन्होंने समूचे दृश्य के रूप में नहीं देखा होगा। दृश्य निर्माण के समय वे उसके विभिन्न तकनीकी दृष्टिकोणों पर विचार कर रहे होंगे। उनके इन प्रयासों के माध्यम से ही एक खूबसूरत फिल्म, धारावाहिक, गीत आदि आपके सामने प्रस्तुत होते हैं। ठीक इसी तरह अनुवादक को भी किसी पाठ के अनुवाद में इतनी ही तकनीकी समस्याओं से उलझना पड़ता है। तब कहीं जाकर एक मुकम्मल पाठ हमारे सामने आ पाता है।

अनुवाद की यह पूरी प्रक्रिया अनुवादक के इसी कठिन परिश्रम की ओर संकेत करती है। किसी पाठ को पूरी तरह समझे बिना तथा उसे आत्मसात् किए बिना अनुवाद कार्य संभव नहीं है। अनुवाद प्रक्रिया के विभिन्न सोपानों से गुज़रकर ही अनुवादक पाठकों के समक्ष एक अनूदित पाठ प्रस्तुत कर पाते हैं। इस दृष्टि से देखा जाए तो अनुवाद प्रक्रिया की तुलना खूबसूरत कपड़े से की जा सकती है जिसकी बुनाई के अनेक सोपानों से गुज़रकर वह हमारे सामने आ पाता है। इस पूरी निर्माण प्रक्रिया में लगाया गया श्रम तथा बुद्धि दोनों का ही उसके निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान है।

अनुवाद प्रक्रिया के सभी महत्वपूर्ण चरणों – पाठ अध्ययन, पाठ विश्लेषण, भाषांतरण, प्रतिस्थापन तथा तुलनात्मक विश्लेषण, इन सभी का अनुवाद में विशेष महत्व है। इन सभी चरणों से गुज़रकर कोई पाठ अंतिम रूप प्राप्त कर पाता है। इसलिए हमारे समक्ष उपलब्ध अनूदित पाठ की संरचना की दृष्टि से अनुवाद प्रक्रिया के ये चरण विशेष महत्व रखते हैं क्योंकि इसी जटिल प्रक्रिया से गुज़रते हुए और अपनी अदम्य मेहनत, लगन तथा समर्पण से ही अनुवादक हमें अज्ञात की ऐसी दुनिया में ले जाते हैं जो इससे पूर्व हमारे लिए अदेखी और अनजान थी। विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध विभिन्न प्रकार के सर्जनात्मक तथा ज्ञानात्मक साहित्य की यह संपदा हम तक पहुँच पाती है और हम व्यापक समाज से जुड़कर न केवल समृद्ध होते हैं अपितु विश्वनागरिक बनने की ओर अग्रसर होते हैं।

3.4 अनुवाद पुनरीक्षण

अनुवाद की प्रक्रिया की चर्चा करते हुए तीन मुख्य प्रक्रियाओं पर विस्तार से चर्चा की जाती है – विश्लेषण, अंतरण तथा पुनर्गठन। इसी पुनर्गठन को भाषांतरण तथा पुनर्स्थापन के संदर्भ में समझा जा सकता है। ऊपर हमने इनके अतिरिक्त तुलनात्मक विश्लेषण की भी चर्चा की है जिसका अर्थ होता है अनूदित पाठ और स्रोतपाठ की तुलना करना। इसी क्रम में एक अन्य बेहद महत्वपूर्ण प्रक्रिया है पुनरीक्षण।

पुनरीक्षण शब्द पुनः+ईक्षण से मिलकर बना है जिसका अर्थ है पुनः देखना। अनुवाद के संदर्भ में पुनःईक्षण से तात्पर्य है अनूदित पाठ का पुनःपाठ तथा उसमें अपेक्षित सुधार

करना। किसी पाठ के अनुवाद से पूर्व अनुवादक से यह अपेक्षा की जाती है कि उसे दो भाषाओं के साथ उस विषय विशेष का भी ज्ञान हो जिसका कि वे अनुवाद कर रहे हैं। स्पष्ट है कि अनुवादक के लिए दो भाषाओं के साथ संबंधित विषय का ज्ञान होना आवश्यक है। इतनी जानकारी होने के बावजूद भी अनुवादक को पाठ का अनुवाद करते समय अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन सभी समस्याओं को ही अनुवादक की चुनौतियाँ कहा जाता है। ये सभी समस्याएँ भाषागत, संस्कृतिगत, विषय के ज्ञान से संबंधित अथवा अन्य अनेक कारणों से हो सकती हैं। अनुवादक इसी क्रम में सबसे पहले स्रोतपाठ का विस्तृत अध्ययन करते हैं और फिर उसके पश्चात पाठ का विश्लेषण तथा अंतरण यानि भाषांतरण किया जाता है। इतनी सब सावधानियाँ बरतने के बावजूद भी अनुवादक से अनेक त्रुटियाँ छूट जाती हैं जो संभवतः स्वाभाविक भी है। ऐसी स्थिति में मुद्रण से पूर्व अनूदित पाठ को फिर से पढ़ा तथा आवश्यकता पड़ने पर सुधारा भी जाता है। इसी प्रक्रिया को पुनरीक्षण कहा जाता है। पुनरीक्षण का यह कार्य स्वयं अनुवादक अथवा किसी अन्य व्यक्ति अथवा दोनों का एक समूह भी कर सकता है। पुनरीक्षण कार्य के लिए सबसे महत्वपूर्ण है निष्ठा, समर्पण एवं तटस्थता। पाठ से स्वयं को पूरी तरह तटस्थ रखकर उसका पुनःपठन तथा पुनरीक्षण किया जा सकता है। अनुवादक से हुई सामान्य भूलों अथवा त्रुटियों को पकड़कर उसमें अपेक्षित सुधार करना और उसे बेहतर पाठ बनाना ही पुनरीक्षक का कर्तव्य है। पुनरीक्षण की इस प्रक्रिया को और बेहतर समझने के लिए कुछ उदाहरणों के माध्यम से बात करना अधिक उचित होगा। उदाहरण के लिए :

IGNOU's unique strength lies in its self-learning instructional materials available in a wide range of disciplines.

अनुवाद : इग्नू की अद्वितीय भाक्ति विभिन्न अनुशासनों में उपलब्ध खुद सीखने वाली सामग्री में पड़ी है।

उपयुक्त अनुवाद : इग्नू की अद्वितीय भाक्ति उसके विभिन्न अनुशासनों में उपलब्ध स्व–अध्ययन सामग्री है।

ऊपर दिए गए उदाहरण के माध्यम से अनुवाद और पुनरीक्षण के अंतर को समझा जा सकता है। पहला अनुवाद मूल वाक्य में दिए गए शब्दों का सही अनुवाद तो है लेकिन अर्थ को पूर्णतः संप्रेषित नहीं करता है। अनुवादक का काम केवल अनुवाद कर देना ही नहीं है अपितु यह भी सुनिश्चित करना है कि मूल पाठ में कही गई बात लक्ष्य पाठ में पूर्णतः संप्रेषित हुई या नहीं।

आइए, एक अन्य उदाहरण की सहायता से इसे और बेहतर समझने का प्रयास करें –

मूल : Mass illiteracy is India's sin and shame and must be liquidated.

अनुवाद : जन–साधारण की निरक्षरता भारत का पाप तथा बदनामी है और इसे परिसमाप्त करना चाहिए।

उपयुक्त अनुवाद : व्यापक निरक्षरता भारत के लिए बेहद भार्मनाक है तथा इसका निवारण करना होगा।

अनुवाद की दृष्टि से दोनों ही वाक्य ठीक हैं किंतु संप्रेषण की दृष्टि से देखा जाए तो नीचे वाला अनुवाद बेहतर होगा। पुनरीक्षक मूल तथा अनूदित पाठ का पुनःविश्लेषण करते हुए एवं वाक्य की आत्मा को पूरी तरह समझते हुए प्रस्तुत अनुवाद को मूल के अनुसार सुधारता है और पाठ का पुनरीक्षण हो जाते ही मुद्रण के बाद उस पाठ में पाई जाने वाली किसी भी प्रकार की चूक अथवा त्रुटि की जिम्मेदारी अनुवाद पुनरीक्षक की हो जाती

है। इस इकाई के अगले भाग में अनुवाद पुनरीक्षक के गुणों अथवा अनुवाद पुनरीक्षक से अपेक्षाओं की चर्चा की जा रही है।

3.4.1 अनुवाद पुनरीक्षण की प्रक्रिया

आइए, अब पुनरीक्षण की प्रक्रिया को समझते हैं। पुनरीक्षण की प्रक्रिया भी अनुवाद की प्रक्रिया से मिलती जुलती है। पुनरीक्षक सर्वप्रथम मूल पाठ का आद्योपांत अध्ययन करते हैं। इसके बाद मूल पाठ तथा अनूदित पाठ को एक साथ रखकर पढ़ा जाता है। एक साथ पढ़ने के इस क्रम में पुनरीक्षक मूल और अनूदित पाठ में मिलान करते चलते हैं। अनुवाद प्रक्रिया में इसे विश्लेषण कहा जाता है। विश्लेषण की इस प्रक्रिया के तहत पुनरीक्षक अपनी समझ के अनुसार त्रुटियों को रेखांकित कर लेते हैं। ये त्रुटियाँ विभिन्न प्रकार की हो सकती हैं जैसे – पाठ के कथ्य के स्तर पर, भाषायी स्तर पर तथा शैलीगत आधार पर। पुनरीक्षक इन त्रुटियों को रेखांकित करते समय कागज़ के हाशिये पर उन शब्दों या प्रयुक्तियों के स्थान पर बेहतर प्रयुक्तियाँ लिखते चलते हैं। इस तरह क्रमवार पूरे पाठ में सुधार कर लिया जाता है। त्रुटिसुधार की यह प्रक्रिया संपन्न हो जाने पर पुनरीक्षक वाक्यों तथा प्रयोग के आधार पर उसका पठन करके देखते हैं। यह पठन इस आधार पर भी देखा जाता है कि लक्ष्य भाषा की भाषा और संस्कृति के अनुसार अनूदित पाठ संप्रेषित हो पा रहा है या नहीं। पुनरीक्षक का यह दायित्व बनता है कि वे केवल त्रुटिगत शब्दों के स्थान पर बेहतर या नए शब्द मात्र न रख दें अपितु यह भी देखें कि लक्ष्यभाषा की संस्कृति में वे शब्द ठीक से संप्रेषित भी हो पा रहे हैं या नहीं। साथ ही, अनूदित पाठ पढ़ते हुए कोई असुविधा तथा असहजता तो नहीं हो रही।

इन सभी आधारों पर अनूदित पाठ का अध्ययन तथा जाँच कर लेने के बाद पुनरीक्षक अंतिम पाठ का निर्माण करते हैं। इस निर्माण प्रक्रिया में वे स्वयं द्वारा किए गए त्रुटि निवारणों को शामिल करते चलते हैं और पाठ को अंतिम प्रारूप देते हैं।

पुनरीक्षण की इस प्रक्रिया का अध्ययन करते हुए आपने महसूस किया गया होगा कि अनुवाद और पुनरीक्षण की प्रक्रिया समान ही है। अंतर केवल इतना है कि पुनरीक्षण वस्तुतः अनूदित पाठ को फिर से देखना तथा उसमें आवश्यकतानुसार सुधार और परिवर्द्धन करके उसे अंतिम प्रारूप प्रदान करना है।

3.4.2 अनुवाद पुनरीक्षण का महत्व

अनुवाद प्रक्रिया के विषय में विस्तार से पढ़ने के बाद आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि अनुवाद प्रक्रिया के कई महत्वपूर्ण चरण होते हैं। इसी क्रम में पुनरीक्षण भी अनुवाद प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण चरण है। विभिन्न चिंतकों ने अनुवाद प्रक्रिया के विभिन्न सोपान गिनवाए हैं। नायडा के प्रारूप के अनुसार अनुवाद प्रक्रिया के तीन चरण हैं – विश्लेषण, अंतरण और पुनर्गठन। न्यूमार्क द्वारा बताए गए चरणों में – बोधन, अभिव्यक्तिकरण और पाठनिर्माण। अनुवाद प्रक्रिया के आंतरिक चरण के रूप में अनुवाद पुनरीक्षण को नहीं देखा जाता किंतु अनूदित पाठ प्रकाशित होकर व्यापक समाज तक पहुँचने से पहले जिन अन्य महत्वपूर्ण चरणों से गुज़रता है उनमें पुनरीक्षण तथा मूल्यांकन महत्वपूर्ण हैं। यद्यपि मूल्यांकन अनुवाद प्रक्रिया का एक ऐसा चरण है जो पाठ के प्रकाशन के बाद भी किया जाता है।

अनुवादक के स्तर पर सामान्यतः अनुवाद की प्रक्रिया पुनर्गठन अथवा पाठनिर्माण के स्तर पर पूरी हो जाती है जिसके पश्चात अनुवादक का काम समाप्त हो जाता है। यहाँ से पुनरीक्षक का प्रवेश होता है और वे पाठ का आद्योपांत अध्ययन तथा तथ्यगत एवं भाषागत विभिन्न स्तरों पर मिलान करते हुए पाठ को अंतिम रूप देते हैं। कभी–कभी अनुवादक

स्वयं भी अपने पाठ का पुनरीक्षण करते हैं लेकिन ज़्यादा बेहतर स्थिति तभी होगी जभी पुनरीक्षण का कार्य अनुवादक से इतर कोई अन्य व्यक्ति करे।

कोई भी पाठ जब पाठक के हाथों तक पहुँचता है तो इस पूरी निर्माण प्रक्रिया में वह कई हाथों से होकर गुज़रता है। अनूदित पाठ के संदर्भ में कहा जाए तो अनुवादक, पुनरीक्षक तथा मूल्यांकनकर्ता – सभी की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

पुनरीक्षक किसी अनूदित पाठ को पढ़ते समय भाषा, शिल्प, वाक्य विन्यास, भाषिक अशुद्धिया, वर्तनी की भूलें, तथ्यगत भूलों आदि की न केवल जाँच करते हैं अपितु उसमें सुधार करके उसे इन सभी दृष्टियों से परिष्कृत करने का काम करते हैं। यद्यपि पाठ के अनुवाद के दौरान अनुवादक अपनी तरफ से बेहतर अनुवाद का प्रयास करते हैं और अपनी ओर से अंतिम प्रारूप जमा करने से पूर्व स्रोत तथा लक्ष्य पाठ का मिलान करते हैं किंतु अनुवाद प्रक्रिया में अनुवादक पाठ से इतना अधिक तादात्म्य बना लेते हैं और अनूदित पाठ से इस तरह जुड़ जाते हैं कि कई बार कई गलतियाँ अदेखी रह जाती हैं। ऐसी स्थिति में पुनरीक्षक का महत्व बढ़ जाता है क्योंकि वे न केवल तटस्थ दृष्टि से पाठ का अध्ययन तथा विश्लेषण करते हैं अपितु अनुवादक से अलग एक अन्य पाठक के रूप में पाठ की भाषा तथा अन्य अशुद्धियों को देखते, उन्हें सुधारते और एक कसे हुए पाठ को प्रस्तुत करते हैं।

इस दृष्टि से अनूदित पाठ को अंतिम प्रारूप देने में पुनरीक्षक का महत्वपूर्ण योगदान रहता है।

3.5 अनुवाद की चुनौतियाँ : विविध स्तर

रचनाकर्म मनुष्य के जीवन के बेहद महत्वपूर्ण क्षणों में होता है। रचनाकार जब किसी रचना को आकार देते हैं तो उनके समक्ष उनका अपना जीवन, उनका समाज, उनकी संस्कृति, उनके अपनों का जिया हुआ अनुभव और अपनी समझ आदि सब आकर खड़े हो जाते हैं और उन्हीं सब के मेल से एक खूबसूरत रचना आकार ले पाती है। ऐसी अनूठी रचना को अनुवाद द्वारा किसी दूसरी भाषा के सहृदय वर्ग तक उतनी ही खूबसूरती से पहुँचा पाना वास्तव में एक बेहद जटिल कार्य है। अनुवाद के दौरान अनुवादिका/अनुवादक को भी लेखिका/लेखक की मनःस्थिति तक पहुँचना होता है और देरिदा के अनुसार कहें तो भाषा की इकाई केवल लिखित भाषा को नहीं माना जा सकता। इसके साथ–साथ लेखक के अनकहे को भी समझने की आवश्यकता होती है, तब कहीं जाकर एक बेहतर अनुवाद सामने आ पाता है। भाषा और पाठ के विकेंद्रीकरण से पाठ न केवल बहुआयामी हो जाता है अपितु पाठक के समक्ष भी उसके कई पाठ खुलने लगते हैं। पाठ लेखक से मुक्त हो जाता है और इस तरह ओरिजिनल अर्थात मूल की बायनरी से मुक्त हो जाता है। (He has elaborated a theory of deconstruction (of discourse, and therefore of the world) that challenges the idea of a frozen structure and advances the notion that there is no structure or centre, no univocal meaning. The notion of a direct relationship between signifier and signified is no longer tenable, and instead we have infinite shifts in meaning relayed from one signifier to another. http:èèwww.signosemio.comèdeÙkidaèdeconstruction-and-differance.asp, retrieved on 28 November 2019)

इसी प्रक्रिया में अनुवादक के समक्ष विभिन्न समस्याएँ आती हैं जिन्हें हम अनुवाद की चुनौतियाँ कहते हैं। अनुवाद की चुनौतियों के विभिन्न स्तर हो सकते हैं, जैसे :

3.5.1 विषय–वस्तु के स्तर पर

जब हम विषय–वस्तु की बात करते हैं तो उसके दायरे में साहित्यिक और गैर साहित्यिक सभी कुछ आ जाता है। जैसे – सर्जनात्मक साहित्य, कार्यालयी साहित्य, विधि साहित्य, विज्ञान संबंधी साहित्य आदि। ऐसे मौलिक साहित्य के अनुवाद के लिए अनुवादक को भाषा के साथ विषय का भी अच्छा ज्ञान होना चाहिए। साहित्य के संदर्भ में बात करें तो विषय की विविधता कई प्रकार की हो सकती है। अस्मिता विमर्श के साहित्य में आने से अस्मितावादी साहित्य की शुरुआत हुई। हर अस्मिता के भोगे हुए अपने अनुभव होते हैं। इन अनुभवों के मौलिक लेखन ने भाषा को कई नए शब्द दिए है किंतु इनके अनुवाद के लिए लक्ष्य भाषा में उचित पर्याय उपलब्ध न होने की स्थिति में अनुवादिका/अनुवादक के सामने एक विकट समस्या खड़ी हो जाती है। यह समस्या भी दो प्रकार की है – एक, लक्ष्य भाषा में उचित पर्याय न मिल पाने से अनुवाद संभव नहीं हो पाता है; दो, यदि पर्याय मिल भी जाएँ तो अनुवाद में एकरूपीकरण की समस्या पैदा हो जाती है जिससे ऐसा अनुवाद सामने आ पाता है जो भाषा का मानक रूप है जबकि अस्मिता केंद्रित साहित्य की विशेषता उसकी अन्य मुख्य धारा के साहित्य से विषमता है। ऐसे में अनुवादिका/अनुवादक अननुवाद्यता की विकट समस्या से जूझते रहते हैं। उदाहरण स्वरूप तमिल लेखिका बामा का संगति, बांग्ला रचनाकार बेबी हालदार का *आलो आंधारि*, फणीश्वर नाथ रेणु का *मैला आंचल*, श्रीलाल शुक्ल का *राग दरबारी*, कवयित्री निर्मला पुतुलका *नगाडे की तरह बजते* हैं शब्द, राकेश कुमार सिंह का *पठार पर कोहरा* आदि इसी तरह की रचनाएँ हैं। इसी तरह कृष्णा सोबती का *जिंदगीनामा* और *मित्रो मरजानी* शुद्ध पंजाबी का पुट लिए हिंदी रचना है जिनके अनुवाद में अनुवादक को कई शब्दों और अभिव्यक्तियों में अननुवाद्यता की समस्या से जूझना पड़ता है। इनके विषय ठीक अपने समाज और सामाजिक विसंगतियों से निकलकर आते हैं। जैसे रेणु के *मैला आंचल* में *चार आना लबड़ी ताडी, रोक साला मोटर गाडी आता* है तब शब्दों के साथ आवश्यक यह भी है कि रचना की मूल वस्तु को समझा जाएँ ऐसे अनुवाद में भाषा की संरचनावादी अवधारणा (जिसके अनुसार संकेतक के साथ उसका तय संकेतित यानी अर्थ ही नहीं खड़ा होता अपितु उसका विलोम भी खड़ा हो जाता है) से काम नहीं चलता। अर्थ के विकेंद्रीकरण से मुख्य धारा से अलग अस्मितावादी विमर्श और साहित्य को समझने में न केवल आसानी होती है अपितु उनके अनुवाद को लेकर भी एक नई दृष्टि मिलती है। देरिदा की दृष्टि से देखें तो अनुवाद के लिए भाषा की संरचनावादी अवधारणा के साथ उत्तर संरचनावादी अवधारणा भी उतनी ही महत्वपूर्ण है क्योंकि एक ओर जहाँ संरचनावादी अवधारणा अनुवाद करने के लिए भाषा के तय पर्याय प्रस्तुत करती है वहीं उत्तर संरचनावादी अवधारणा नए सत्यों, नई अवधारणाओं के सही और ज़रूरी पाठ के लिए भी मार्ग बनाती है। रुटलेज इनसाइक्लोपीडिया ऑफ ट्रांसलेशन स्टडीज़ के अनुसार :

The limit of any language is both a boundary and a structural opening to its outside. Just as this structure makes translation between languages possible, it also makes possible new translations of identities such as race, gender, culture or ethnicity. (pg. 75)

उदाहरणस्वरूप कृष्णा सोबती के उपन्यास *मित्रो मरजानी* की चर्चा करें जिसका अंग्रेजी अनुवाद *To hell with you Mitro* के नाम से हुआ, अनुवादिका ने न केवल तय भाषा और उपलब्ध अर्थों के माध्यम से उसका अनुवाद किया अपितु स्त्री होने के नाते अपने अनुभवों के आधार पर शब्दों को स्त्री अस्मिता के धरातल पर समझते हुए उसके अनुवाद में अनुवादकीय समझ का भी प्रयोग किया। वहीं गायत्री चक्रवर्ती स्पीवाक ने महाश्वेता देवी की कहानी *स्तनदायिनी* का अनुवाद केवल उसका भावगत अनुवाद करते हुए नहीं किया बल्कि उसका शाब्दिक अनुवाद करते हुए और पूरी अनुवादकीय छूट लेते हुए स्त्री अस्मिता और लेखिका द्वारा उठाए गए मुद्दे को उसके मर्म तक समझते हुए उसका अनुवाद *The Breast Giver*

के रूप में किया जिसे अनुवाद की दृष्टि से एक खराब या शब्दानुवाद भी कहा जा सकता है। गायत्री स्पीवाक इस शीर्षक का शाब्दिक अनुवाद करके शीर्षक के मूल तत्व तक पहुँचना चाहती हैं और यह बताना चाहती हैं कि भारतीय समाज में स्त्री के शारीरिक–मानसिक शोषण की लंबी परंपरा रही है जिसमें स्त्री देह हमेशा शोषित होती रही है।*स्तनदायिनी* शीर्षक का अनुवाद *The Breast Giver* करने के पीछे उनका उद्देश्य भारतीय समाज में और उसके भी भीतर दोहरी मार झेल रही आदिवासी स्त्रियों के शोषण को उजागर करना है।

3.5.2 सामाजिक–सांस्कृतिक स्तर पर

1980 के आसपास अनुवाद में आए सांस्कृतिक मोड़ ने अनुवाद के प्रति पूरी दृष्टि ही बदलकर रख दी। अब अनुवाद केवल भाषायी गतिविधि न रहकर एक सांस्कृतिक गतिविधि हो गया जिसमें अनुवाद की केंद्रीय इकाई भाषा से बदलकर संस्कृति हो गई। अनुवाद के प्रति इस बदलते दृष्टिकोण की ओर संकेत करते हुए लेफेवेयर और बेसनेट अपनी पुस्तक *Translator, History and Culture* में लिखते हैं –

Now the questions have been changed. The object of study has been redefined; what is studied is text embedded within its network of both source and target cultural signs.(pg 11-12)

अपनी इसी बात पर बल देती हुई सूसन बेसनेट अपने निबंध *Culture and Translation* में लिखती हैं – *What is obvious now, with hindsight, is that the cultural turn was a massive intellectual phenomenon, and was by no means only happening in translation studies. Across the humanities generally, cultural questions were assuming importance.(pg 15)*

स्पष्ट है कि यह सांस्कृतिक मोड़ केवल अनुवाद में ही नहीं, अपितु मानिविकी से संबंधित सभी विषयों, जैसे – भाषाविज्ञान, मानवविज्ञान, इतिहास, साहित्य, भूगोल आदि सभी में देखा गया। विभिन्न विषयों में सांस्कृतिक अध्ययन की इस लहर ने साहित्य और मानविकी के विभिन्न विषयों को देखने का नज़रिया ही बदलकर रख दिया। इस बदले नज़रिये ने साहित्य और अनुवाद के क्षेत्र में संस्कृति को मूल तत्व के रूप में स्थापित किया। परिणामस्वरूप, एकरेखीय समझे जाने वाले अनुवाद अध्ययन में महत्वपूर्ण बदलाव देखे गए। अनुवाद की केंद्रीय इकाई *भाषा* के स्थान पर *संस्कृति* हो जाने से और सांस्कृतिक अध्ययन (Cultural Studies) की ओर अत्यधिक झुकाव ने अनुवाद में अस्मितावादी साहित्य – जेंडर, जाति, अल्पसंख्यक, विचारधारा आधारित साहित्य के अध्ययन को प्रश्रय दिया। फलस्वरूप अनुवाद की चुनौतियों के स्वरूप में भी बदलाव आया।

चूँकि अनुवाद की मूल इकाई *संस्कृति* हो गई, इसलिए अनुवाद करते समय आने वाली कठिनाइयों या दुविधाओं को भी केवल भाषागत दृष्टि से देखा जाना अपर्याप्त लगने लगा। अब किसी पाठ का अनुवाद करते समय केवल यह देखा जाना आवश्यक नहीं है कि उसके अनुवाद हेतु लक्ष्य भाषा में निकटतम समतुल्य अथवा dynamic equivalence उपलब्ध है या नहीं जैसा कि नायडा अपने अनुवाद के सिद्धांत में कहते हैं। अपितु अब यह भी देखा जाना ज़रूरी है कि इस प्रक्रिया में कहीं मूल भाषा की संस्कृति लुप्त होकर न रह जाएँ

कोई भी साहित्यिक रचना अपने परिवेश में रची–गुँथी होती है। उसका समाज, उसकी संस्कृ ति उस पर इस कदर हावी होती है कि उसे पढ़ने मात्र से आप उस समाज के रहन–सहन और चिंतन पद्वति का अनुमान लगा सकते हैं। यू.आर. अनंतमूर्ति का *संस्कार* हो या तकशि शिवशंकर पिल्लै का *चेम्मीन*, बामा का *संगति* हो या फिर शरतचंद्र चट्टोपाध्याय का *परिण ीता* या फिर धर्मवीर भारती का *गुनाहों का देवता* सभी रचनाएँ हमें अपने समय, परिवेश, चिंतन पद्वति से अनजाने ही अवगत करवाती चलती हैं। हम उनके माध्यम से उस समय और

समाज को समझ रहे होते हैं। उन रचनाओं को जब हम उस समय और समाज के ढाँचे से बाहर रखकर अनुवाद करते हैं तो कई किस्म की समस्याएँ आती हैं। जैसे – कुछ ऐसे शब्दों से परिचय होता है जो उस समय चलन में थे किंतु अब या तो उनका स्वरूप और अर्थ बदल गया है या फिर वे प्रयोग से बाहर हो गए हैं। अनुवादक अनुवाद से पूर्व पाठ विश्लेषण के दौरान इन शब्दों और प्रयोगों को रेखांकित करते चलते हैं और अनुवाद की अपनी रणनीति तय करते चलते हैं। इस तय रणनीति के माध्यम से अनुवादक की रचना के प्रति, अनुवाद के प्रति और किसी निश्चित विचार या अस्मिता के प्रति समझ भी प्रकट होती है। ऐसी स्थिति में या तो वे इनके स्थान पर प्रयुक्त हो रहे नए शब्दों का प्रयोग करते हैं और कोष्ठक में या फुटनोट में उसकी व्याख्या करते हैं या फिर मूल भाषा के शब्दों का ही लिप्यंतरण करते हुए टिप्पणी में उसे स्पष्ट कर देते हैं।

अनुवादक के सामने आ रहे ये शब्द उनके लिए किस प्रकार की चुनौती लेकर आते हैं और इनका समाधान वे किस तरह तलाशते हैं, इसे देखे जाने की आवश्यकता है। सामाजिक–सांस्कृतिक स्तर की अननुवाद्यता में समस्या उत्पन्न करने वाले शब्द वे होंगे जिनकी अवधारणा स्रोत भाषा में तो होगी, लेकिन लक्ष्यभाषा में नहीं। जैसे – विभिन्न अनूदित पाठों में हमने अनुवादिकाओ/अनुवादकों को मूल शब्द के निकटतम पर्याय के प्रयोग के माध्यम से हल निकालते देखा है जो अनूदित पाठ के पाठक तक पाठ को संप्रेषित करने के लिए उचित भी है। प्रसिद्ध अनुवाद चिंतक वॉल्टर बेंजामिन अपने निबंध *Task of the Translator* में लिखते है कि अनुवाद उनके लिए नहीं किया जाता है जो मूल पाठ को समझ सकते हैं। लेकिन इसके साथ यह भी उल्लेखनीय है कि अनुवाद के उत्तर संरचनावादी अथवा उत्तर उपनिवेशवादी चिंतक अनुवाद को अलग नज़र से देखते हैं। अनुवाद कर्म में अनुवाद की समस्या केवल भाषिक या सांस्कृतिक समस्या नहीं है अपितु वह अनुवादक की अपनी वैचारिकी, अपनी सैद्धांतिकी की समस्या भी है।

3.5.3 अनुवाद में मूलनिष्ठ बनाम ईमानदार अनुवाद का प्रश्न

अनुवाद के लिए कहा जाता है कि वही अनुवाद सबसे बेहतर है जिसे पढ़ते हुए मूल का सा आस्वाद हो। यानी अनुवाद पढ़ते समय पाठक अनूदित पाठ के साथ हिचकोले न खाएँ। दूसरे शब्दों में कहें तो अनुवाद पढ़ते हुए पता ही न चले कि अमुक पाठ अनुवाद है। अनुवादक ऐसे पाठों में अदृश्य रहकर अपनी भूमिका निभाते हैं। आदर्श अनुवाद की स्थिति में यह बात काफी हद तक सही भी लगती है। लेकिन अनुवाद के उत्तर उपनिवेशवादी चिंतक लॉरेंस वेनुटी अनुवादक की दृश्यता की वकालत करते हैं। अपनी पुस्तक *The Translator's Invisibility : A History of Translation* में वे अमेरिका में 17वीं सदी से हो रहे अनुवाद कर्म के आधार पर किए गए अध्ययन में स्पष्ट करते हैं कि अनुवादक का अदृश्य होना वास्तव में केवल अच्छे अनुवाद की प्रस्तुति ही नहीं है, अपितु अनुवादक के अनुवाद के दौरान किए गए विभिन्न प्रयासों को अनदेखा करना भी है। और साथ ही मूल संस्कृति के देय की अवहेलना भी है।

What is so remarkable here is that this illusory effect conceals the numerous conditions under which the translation is made, starting with the translator's crucial intervention in the foreign text The more fluent the translation, the more invisible the translator, and, presumably, the more visible the writer or meaning of the foreign text.

एंग्लो–अमेरिकी संस्कृति में अनुवाद के प्रति दोयम व्यवहार की ओर संकेत करते हुए वेनुटी लिखते हैं कि अनुवादक को अदृश्य रखकर ही साहित्य जगत में अनुवादक की दोयम स्थिति को बनाए रखा जा सकता है।

The translator's invisibility is thus a weird self-annihilation, a way of conceiving

and practicing translation that undoubtedly reinforces its marginal status in Anglo-American culture.

वेनुटी इस स्थिति के समाधान और अनुवादक के साथ–साथ उपेक्षित और दोयम दर्जे के व्यवहार को रोकने और अनुवाद के एकरूपीकरण से बचाव के लिए अनुवादक की दृश्यता की वकालत करते हैं। अनुवादक की दृश्यता तभी संभव है जब स्रोत पाठ का अनुवाद करते समय सब कुछ का अनुवाद कर देने की ज़िद को छोड़ दिया जाए क्योंकि जब स्रोत पाठ का पूर्णतः अनुवाद कर दिया जाता है तब स्रोत पाठ और स्रोत संस्कृति उसमें कहीं विलुप्त हो जाते हैं। स्रोत संस्कृति की विशिष्टता को बचाए रखने के लिए आवश्यक है कि अनुवादक के लिए अनुवाद की इकाई भाषा न होकर संस्कृति हो। भाषायी समतुल्य खोजकर अनुवादक न केवल गुमनामी के शिकार हो जाते हैं अपितु स्रोत संस्कृति भी पूरी तरह उल्लिखित नहीं हो पाती।

अनुवादकर्म के दौरान अनुवादकों के समक्ष विविध स्तरों पर आने वाली ये चुनौतियाँ अनुवाद की एक महत्वपूर्ण समस्या है जिसके लिए विभिन्न चिंतकों जैसे – केटफर्ड, नायडा आदि ने विभिन्न तकनीकें सुझाई हैं। नायडा का निकटतम समतुल्य का सिद्धांत इस दिशा में सबसे अधिक कारगर सिद्ध हुआ है जिसके अंतर्गत वे लक्ष्यभाषा में समतुल्य शब्द की तलाश करने पर ज़ोर देते हैं और मानते हैं कि समतुल्यों के आधार पर अनुवाद का जटिल काम अपेक्षतया आसानी से किया जा सकता है। नायडा द्वारा सुझाया गया यह सिद्धांत कई मायनों में कारगर सिद्ध होता है किंतु इस तकनीक के तहत उपनिवेशित राष्ट्र के *रोटी* शब्द को उपनिवेशक की भाषा और संस्कृति में ढालकर *bread* तो कहा जा सकता है लेकिन रोटी और रोटी के साथ जुड़े विभिन्न अनुभव ऐसे अनुवाद में छूट जाते हैं। यदि अनुवादिका/अनुवादक अनुवाद करते समय रोटी को रोटी या दुपट्टे को *scarf* कहने की जगह *दुपट्टा* ही कहें और साथ में उसे सामाजिक–सांस्कृतिक और पारंपरिक महत्व को भी समझाएँ तो संभव है कि अनुवाद थोड़ा कम रुचिकर हो, किंतु वह एक ईमानदार अनुवाद होगा और स्रोत पाठ की संस्कृति से एक विदेशी और अनभिज्ञ पाठक को अवगत करवाएगा।

यूँ भी अस्मिता विमर्श का साहित्य जो कि स्वयं ही उत्तर औपनिवेशिक विमर्श की देन है, का अनुवाद भाषायी दृष्टिकोण से हो भी नहीं सकता। अस्मिता विमर्श का साहित्य अपने साथ अपने जिए नए अनुभवों को लेकर आता है जिन्हें इससे पहले साहित्य में स्थान नहीं मिला। अपने नितांत निजी अनुभवों से उपजा यह साहित्य भाषा की दृष्टि से भी नए शब्दों और प्रयोगों से परिचय करवाता है, जिसका अनुवाद भाषा के अनुकूलीकरण के माध्यम से हो ही नहीं सकता और यदि होता भी है तो उसके साथ और संबंधित विमर्श के साथ अन्याय होगा। अनुवाद में जेंडर विमर्श की पैरोकार और क्यूबेकियन लेखिका और अनुवादिका बारबरा गोदार्ड अनुवाद में अनुवादिका के पूर्णतः दृश्यमान होने की पुरजोर पैरवी करती हुई कहती हैं –

Godard uses the term womanhandling to describe feminist approaches to translation and considers that feminist translators should flaunt their presence and agency in the text, making themselves and their work visible, and thereby reversing in the age-old order of translators' and women's public and literaryèscholarly invisibility.

अनुवाद की केंद्रीय इकाई संस्कृति हो जाने से अनुवाद करने का पूरा दृष्टिकोण ही बदल जाता है। अनुवाद में नई रणनीतियों और तकनीकों की शुरुआत होती है जिसके अंतर्गत सामाजिक–सांस्कृतिक तथा अस्मिता विशेष से संबंधित शब्दों का अनुवाद न करके उन्हें अनुवादकीय टिप्पणी के माध्यम से स्पष्ट किया जाता है।

3.5.4 अभिव्यक्ति के स्तर पर

अभिव्यक्ति से तात्पर्य है वस्तु को अभिव्यक्त करने की युक्ति। ज्ञानपरक साहित्य के संदर्भ में कहें तो चाहे वह कार्यालयी साहित्य हो, विधि साहित्य हो, वैज्ञानिक साहित्य हो या फिर समाजशास्त्रीय साहित्य हो –इन सबकी अभिव्यक्ति की अपनी एक खास प्रयुक्ति होती है। भाषा की तीन शब्द शक्तियों – अभिधा, लक्षणा, व्यंजना में से सर्जनात्मक साहित्य के संदर्भ में अभिधा को चाहे कितना भी कमतर आँका जाए किंतु ज्ञानपरक साहित्य में अभिधा शब्द शक्ति ही सर्वोचित मानी जाती है। ज्ञान की इन सभी शाखाओं में न तो रचनाकार और न ही अनुवादक किसी प्रकार की छूट ले सकते हैं। इन क्षेत्रों में अननुवाद्यता की समस्या तब आती है जब किसी नई अवधारणा से जुड़े ऐसे शब्दों का अनुवाद करना पडे जो कि लक्ष्य भाषा की संस्कृति में उपलब्ध नहीं है। ज्ञानपरक साहित्य की विभिन्न शाखाओं में पारिभाषिक शब्दावली की संकल्पना का अपना महत्व और विशिष्ट स्थान होता है। इस प्रकार के साहित्य का अनुवाद करते समय इन पारिभाषिक शब्दावलियों में पर्याय न मिलने पर अनुवादक के समक्ष विकट समस्या इस प्रकार खड़ी हो जाती है कि यहाँ वे सर्जनात्मक साहित्य की तरह छूट नहीं ले सकते और उन्हें शब्द विशेष के उचित पर्याय की आवश्यकता होती है। ऐसे में वे मूल भाषा के शब्दों का लिप्यंतरण करके उन्हें अनुकूलित करके या फिर नया शब्द गढ़कर लक्ष्य भाषा में प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं।

इसी तरह स्रोतभाषा की वाक्य संरचना, शब्द चयन, लोकोक्ति–मुहावरे, परिवेश, रूप रचना आदि में भी अनुवादक को तालमेल बैठाने की आवश्यकता होती है। इसीलिए यह आवश्यक है कि अनुवादक को दो भाषाओं के ज्ञान के साथ उन दोनों भाषाओं की संस्कृतियों का पर्याप्त ज्ञान हो।

3.5.5 शैली के स्तर पर

सर्जनात्मक साहित्य के अनुवाद में यह समस्या शैली के स्तर पर भी आती है। उदाहरणस्वरूप यदि लक्ष्य भाषा की संस्कृति स्रोतभाषा की संस्कृति के किसी पाठ को एक या एकाधिक कारणों से अपनी संस्कृति में लाना तो चाहती है लेकिन शैलीगत कठिनाई के चलते उसे समस्याओं का सामना करना पड़ता है तब वे शैली की सीमाओं को तोडकर कथ्य का अनुवाद कर लेते हैं। जैसे *महाभारत* और *रामायण* आदि धार्मिक ग्रंथों के अंग्रेजी तथा अन्य विदेशी भाषाओं में हुए अनुवादों का यहाँ उल्लेख किया जा सकता है। कविता के अनुवाद में इस तरह की समस्या अधिक आती है जहाँ स्रोतभाषा की संस्कृति में लय, छंद, अलंकार, गति आदि के अपने तय पैमाने होते हैं। लक्ष्यभाषा के भाषायी और सांस्कृतिक ढाँचे में ढालना अनुवादक के लिए बहुत बड़ी चुनौती हो जाता है। ऐसी स्थिति में रोमन जेकब्सन कविता के अनुवाद को एक असंभव कार्य मानते हुए *क्रिएटिव ट्रांसपोज़िशन* यानी *पुनःसृजन* की सलाह देते हैं। ऐसी स्थिति में यह सवाल तो जायज़ है कि अनुवाद की सीमित परिभाषा यानी *ट्रांसलेशन प्रॉपर* की दृष्टि से वह कितना सही है।

सवाल यहाँ फिर से वही उठता है कि पाठ का अनुवाद करने के पीछे अनुवादक का उद्देश्य क्या है। यदि केवल कथ्य का अनुवाद करना है तो उसे विधा का बंधन तोड़कर भी किया जा सकता है लेकिन यदि विधागत अनुवाद करना है तो अनुवादक को चुनौती लेनी ही होगी। साहित्य और विधाओं का इतिहास बताता है कि अनुवादकों ने इस प्रकार की चुनौतियाँ ली हैं। कविता में हाइकू, सॉनेट आदि इसी के उदाहरण हैं। अनुवादक को अनुवाद करने की छूट तथा स्रोत संस्कृति से केवल पाठ ही नहीं अपितु संस्कृतिगत तत्वों को लाने की समझ ही बेहतर अनुवाद उपलब्ध करवा सकती है।

3.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के बाद आपने यह जाना कि अनुवाद प्रक्रिया का अनुवाद के क्षेत्र में क्या योगदान है, अनुवाद प्रक्रिया के विभिन्न सोपानों में अनुवादक की भूमिका किस प्रकार बदलती है तथा एक अनूदित पाठ के निर्माण में अनुवाद को किन–किन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। साथ ही आपने यह भी जाना कि किसी भी पाठ के मुद्रण से पहले पुनरीक्षण की आवश्यकता क्यों पड़ती है। इस इकाई में आपने अनुवाद प्रक्रिया, अनुवाद प्रक्रिया के महत्व, अनुवादक के समक्ष आने वाली चुनौतियों तथा उनके निवारण के विषय में विस्तार से जानकारी प्राप्त की। आपने यह भी जाना कि अनुवाद प्रक्रिया के विभिन्न सोपानों में एक अन्य महत्वपूर्ण सोपान पुनरीक्षण भी है। अगली इकाई में आप अनुवाद अध्ययन के क्षेत्र में हो रहे विकास तथा अनुवाद के उभरते मुद्दों व इनसे संबंधित विविध आयामों के विषय में अध्ययन करेंगे।

3.7 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. अनुवाद प्रक्रिया के विभिन्न सोपान कौन–कौन से हैं?
2. नायडा द्वारा बताए गए अनुवाद प्रक्रिया के विभिन्न सोपानों की चर्चा कीजिए।
3. न्यूमार्क द्वार बताए गए अनुवाद प्रक्रिया के विभिन्न सोपानों की चर्चा कीजिए।
4. बाथगेट द्वारा बताए गए अनुवाद प्रक्रिया के विभिन्न सोपानों की चर्चा कीजिए।
5. अनुवाद पुनरीक्षण से आपका क्या अभिप्राय है?
6. अनुवाद कार्य में अनुवाद प्रक्रिया की उपयोगिता की चर्चा कीजिए।
7. अनुवाद कार्य एक चुनौतीपूर्ण कार्य है? उदाहरण सहित समझाइए।
8. पुनरीक्षण प्रक्रिया पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
9. अनुवाद में पुनरीक्षण/पुनरीक्षक के महत्व पर प्रकाश डालिए।
10. अनुवादक और पुनरीक्षक में क्या अंतर है? संक्षेप में समझाइए।
11. क्या पुनरीक्षण अनुवाद प्रक्रिया का एक सोपान है? चर्चा कीजिए।
12. अच्छे अनुवादक में क्या–क्या गुण होने चाहिए? वर्णन कीजिए।
13. अनुवाद की चुनौतियाँ विषय पर निबंध लिखिए।
14. अनुवादक को विषय–वस्तु के स्तर पर किस प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है? समझाइए।
15. पाठ के सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश का अनुवाद बेहद जटिल कार्य है? टिप्पणी कीजिए।

3.8 उपयोगी पुस्तकें

- प्रो. हरिमोहन, अनुवाद विज्ञान और संप्रेषण, तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली।

- नवीन, देवशंकर, अनुवाद अध्ययन का परिदृश्य, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।
- गुप्ता नीता (संपा.), अनुवाद शतक विशेषांक 100–101, भारतीय अनुवाद परिषद, अंक जुलाई–दिसंबर 1999।
- गुप्ता नीता (संपा.), अनुवाद शतक विशेषांक 102–103, भारतीय अनुवाद परिषद, अंक जनवरी–जून 2000।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY